विज्ञान केवल मातृ-भाषा में ही पढ़ाया जाना चाहिए

डॉ. जयंत नार्लीकर

हिन्दी में

विज्ञान जैसा विषय पढ़ाया जाए या नहीं। यह सवाल अकसर उठाया जाता है। प्रसिद्ध वैज्ञानिक डॉ. जयंत नार्लीकर का मानना है कि विज्ञान केवल मातृभाषा में ही पढ़ाया जाना चाहिए क्योंकि विज्ञान रटने का नहीं, समझने का विषय है। यहां डॉ. जयंत नार्लीकर ने विज्ञान के प्रसार में हिन्दी की भूमिका को स्पष्ट किया है।

विज्ञान-प्रसार के बारे में मैं कुछ कहना चाहता हूं। पहला प्रश्न यह कि विज्ञान की पढ़ाई किस भाषा में होनी चाहिए? मैं अपना अनुभव बताता हूं। मैंने विज्ञान हिन्दी में पढ़ा था। मैं पहली कक्षा से दसवीं कक्षा तक बनारस में जिस स्कूल में विद्यार्थी था, वहां हिन्दी माध्यम से विज्ञान पढ़ाया गया और मैं हिन्दी में विज्ञान पढ़ता था। मुझे उसमें कोई कठिनाई नजर नहीं आई। बच्चे जिस भाषा में विचार करते हैं, उस भाषा में विज्ञान पढ़ाना चाहिए, क्योंकि विज्ञान सोचने-समझने की चीज है, रटने की नहीं। आपको इतिहास-भूगोल पढ़ाना है तो चाहे जिस भाषा में पढ़ाइए, मुझे कोई एतराज नहीं है, क्योंकि जो आजकल यहां की शिक्षा-प्रणाली है, उसके बारे में मैं बहुत निराशावादी हूं। आप कैसा भी पाठ्यक्रम बनाइए, इतिहास और भूगोल रटकर ही पढ़ाया जाता है और रटकर ही उसकी परीक्षा ली जाती है। वह किसी भाषा में आप करिए या कोई विदेशी भाषा लीजिए, फ्रेंच में लीजिए, उसमें कोई एतराज नहीं, उसमें बच्चे को कुछ समझ में नहीं आता। आज उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश की उपज ये सब वे पढ़ लेंगे और अगले साल भूल जाएंगे, लेकिन विज्ञान के बारे में ऐसा नहीं है।

विज्ञान जो है, सृष्टि के जो नियम हैं, उन नियमों को समझना चाहते हैं, जिसके कारण सृष्टि का व्यवहार-व्यापार चलता रहता है, उन नियमों को आप अच्छी तरह कैसे समझ सकते हैं? आप जिस भाषा में अपने मन में विचार करते हैं, उस भाषा में आप विज्ञान अधिक अच्छी तरह समझ सकते हैं। मेरा तो यही अनुभव रहा। अगर आप किसी भी अंग्रेजी माध्यम के स्कूल का पाठ्यक्रम देखें तो उसमें बड़े लम्बे-लम्बे शब्द रहते हैं, उन शब्दों का क्या मतलब होता है, बच्चों को समझ में नहीं आता। वे वैसा का वैसा रट लेते हैं, वैसा ही ''होमवर्क'' में उतार लेते हैं और अध्यापक भी हिज्जे ठीक देखकर संतुष्ट हो जाते हैं, उसमें जो विज्ञान भरा है, वह बच्चों को समझ में आया या नहीं, इसकी चिन्ता किसी को नहीं होती। विज्ञान मातृभाषा में पढ़ाया जाना चाहिए। कम से कम जहां विज्ञान की शुरुआत होती है स्कूल के पाठ्यक्रम में, वहां तो विज्ञान मातृभाषा में ही पढ़ाया जाना चाहिए। इस देश में हिन्दी अधिक लोगों की मातृभाषा है। जहां मातृभाषा के रूप में हिन्दी का उपयोग करते हैं, वहां विज्ञान की पढ़ाई हिन्दी में होनी चाहिए। आगे चलकर जब आप विज्ञान में शोध प्रबन्ध प्रस्तुत करना चाहते हैं, पी-एच. डी. करना चाहते हैं या उच्च अध्ययन करना चाहते हैं, तो अन्य देशों में विज्ञान की प्रगति जानने के लिए अंग्रेजी की आवश्यकता पड़ेगी। अंग्रेजी का ज्ञान आवश्यक है, लेकिन एक दूसरे कारण से। विज्ञान में जो नई-नई बातें आ रही हैं, अधिकांश हम अंग्रेजी में पढ़ते हैं। टेलीविजन या फिल्मों में जो जानकारी आती है, वह अंग्रेजी में होती है, इसलिए अंग्रेजी का ज्ञान आवश्यक है, लेकिन जहां पर समझने का सवाल है, मातृभाषा का महत्व अधिक है।

दूसरी समस्या जो सामने आती है, वह है–पारिभाषिक शब्दों की। जब आप विज्ञान के बारे में कुछ समझाना चाहते हैं या उसके बारे में लिखना चाहते हैं, कुछ पारिभाषिक शब्द आपको लाने पड़ते हैं, वैज्ञानिक निबंध में आपको ऐसे शब्द मिलते हैं। कहां तक हम अंग्रेजी शब्दों का इस्तेमाल करें, कहां तक हम नए शब्द बनाएं और किस प्रकार बनाएं इन शब्दों को? किसी भी भाषा का विकास अनेक तरीकों से होता है। एक तरीका यह है कि शब्द-भंडार बढ़ना चाहिए। अन्य भाषाओं के शब्द उसमें लिए जाएं। आप अंग्रेजी भाषा देखें, अंग्रेजी शब्दकोष खोलकर देखें, उसमें ऐसे अनेक शब्द मिलेंगे, जिनका मूल अन्य भाषाओं में था, लेकिन अंग्रेजी भाषा में वे समा गए। उसी प्रकार हिन्दी में भी हमें ऐसा आग्रह नहीं रखना चाहिए कि हम बिलकुल शुद्ध हिन्दी वाले भारत में बने शब्द ही रखें। विदेशी शब्दों को हिन्दी में लाना चाहिए, इसमें हिन्दी का निरादर नहीं होगा, बल्कि हिन्दी में एक नई ताकत आएगी। जैसे रेडियो शब्द है, जो बाहर से आया है, पारिभाषिक शब्द है। हो सकता है, आप रेडियो का अनुवाद करके कोई हिन्दी शब्द बनाएं, लेकिन उसका कोई इस्तेमाल नहीं कर पाएगा। ''रेलगाड़ी'' शब्द है, जो हिन्दी में समा गया है, लेकिन उसका ''गाड़ी'' शब्द हिन्दी है और 'रेल' शब्द अंग्रेजी है। कोई ऐसा नहीं कहता कि रेलगाड़ी बाहरी शब्द है। विज्ञान के बारे में मुझे यह कहना पड़ता है कि जो कुछ शब्द हैं, उनमें अंग्रेजी के भी हों तो कोई हर्ज नहीं है। हम उसका इस्तेमाल करके हिन्दी की पारिभाषिक शब्द-संख्या बढ़ा रहे हैं।

जब आपको नए पारिभाषिक शब्द बनाने ही हैं तो संस्कृत भाषा से बनाना उचित है, जैसे अंग्रेजी में लैटिन या ग्रीक क्लासिकता लैंग्वेज से बनाए गए हैं, लेकिन संस्कृत भाषा की जो अनेक संतानें हैं–हिन्दी, मराठी, बंगाली आदि–इनमें एक ही पारिभाषिक शब्द के लिए वही संस्कृत शब्द नहीं चुना गया है। इसके अनेक उदाहरण मैं दे सकता हूं। मराठी और हिन्दी का उदाहरण देता हूं। ''एटम'' को मराठी वाले अणु कहते हैं, हिन्दीवाले परमाणु कहते हैं। ''मोलीक्यूल'' को हिन्दी में अणु और मराठी में रेणु कहा जाता है। मेरी दृष्टि में ऐसी भिन्नता अनावश्यक है, क्योंकि एक ही संस्कृत भाषा से शब्द बना रहे हैं। अगर राष्ट्रीय स्तर पर एक समिति यह निश्चित करे कि हम ''एटम'' को क्या कहें तो अच्छा होगा। हो सकता है, मराठीवालों ने जो शब्द चुने हैं, वे अच्छे हैं, या हिन्दीवालों ने जो चुने हैं, वे अच्छे हैं, या बंगाली में जो चुने गए हैं, वे अच्छे हैं, लेकिन हमें एक पारिभाषिक शब्दावली बनानी चाहिए, जिससे कि मेरे जैसे लोगों को दुविधा न हो। मुझे कभी मराठी में भाषण देना होता है तो कभी हिन्दी में। एटम के लिए कभी गलती से अणु और मराठी में परमाणु बोल देंगे। ऐसी गलतियां दूर की जा सकती हैं। दूर की जानी चाहिए।

जहां तक विज्ञान के प्रसार में हिन्दी के उपयोग का सवाल है, एक तो ऐसे लेख लिख सकते हैं, जो कि सामान्य नागरिक पढ़ सके। विज्ञान के बारे में उनके मन में एक तरह का डर रहता है कि यह हमारे बूते की चीज नहीं है। दूर प्रयोगशालाओं में जो लोग बैठे हैं, विज्ञान करते हैं, उन्हीं के समझ की बात है। यह धारणा गलत है। लोगों की भाषा में अगर हम लेख लिखें, विज्ञान के बारे में कुछ बताएं तो उनकी धारणा दूर हो सकती है। इसका एक उदाहरण मुझे ध्यान में आता है। विज्ञान-कथाओं को पंचतंत्र में कैसे लिखा गया है? एक धनिक था, उसके बच्चे सामान्य पाठशाला में कुछ पढ़े-लिखे नहीं सकते थे। उसने पंडित विष्णु शर्मा को बुलाया और कहा कि इनको जरा सिखाओ, बिलकुल पढ़ते नहीं, उजड्ड लगते हैं तो उन्होंने कहानियां सुनाईं। कहानियों के रूप में जो नीति है, जो नीति मूल्य है, बच्चों के सामने रखे और उन्हें सिखाया।

विज्ञान के बारे में कुछ ऐसा ही किया जा सकता है। जो चीजें सामान्य पाठक किसी सादे लेख में नहीं पढ़ना चाहेगा, वह विज्ञान की कथा के रूप में अच्छी तरह से पढ़ सकेगा। एक अच्छी विज्ञान-कथा का उदाहरण मैं आपको देता हूं, जो पहले जूले वर्न ने फ्रेंच में लिखी थी - (अराउंड द वर्ल्ड इन एटी डेज) - उसका अंग्रेजी में अनुवाद हुआ, फिर अनेक भाषाओं में हुआ, हिन्दी में भी उसका अनुवाद हुआ है। कहानी में एक आदमी बाजी लगाता है कि अस्सी दिन में पृथ्वी का चक्कर लगाकर आऊंगा और पूरब की ओर जाते-जाते जब वह लौटता है तो उसे इक्यासी दिन करीब-करीब लग जाते हैं, और सोचता है कि वह बाजी हार गया, लेकिन बात ऐसी होती है कि पृथ्वी अपनी धुरी पर घूमती रहती है, इस कारण जैसे-जैसे हम पूरब की ओर जाते हैं - आजकल के हवाई जहाज के यात्रियों को इसका अनुभव होता है कि अपनी घड़ियां आगे करनी पड़ती हैं तो उसने ऐसा ही किया था, लेकिन उसे कुछ ध्यान नहीं आया कि केवल अस्सी दिन ही बीते थे, इक्यासी दिन नहीं बीते थे, क्योंकि वह पूरा चक्कर लगाकर जब आया, वह घड़ी को आगे बढ़ाते-बढ़ाते आया था और वह बाजी असल में जीत गया।

तो यह तो एक तथ्य है, जो विज्ञान कथा के रूप में लोगों ने पढ़ा और तब उन्हें तथ्य अच्छी तरह से समझ में आया। ऐसी काफी विज्ञान-कथाएं हैं, जो लिखी जा सकती हैं और कुछ ऐसी विज्ञान-कथाएं भी लिखी जा सकती हैं, जिसमें समाज-प्रबोधन किया जा सकता है। समाज में जो एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण आना चाहिए, जिसके बारे में आजकल काफी कहा जाता है, बोला जाता है, लिखा जाता है, इस वैज्ञानिक दृष्टिकोण का क्या महत्व है, किस प्रकार उसे आचरण में लाया जा सकता है, यह कथा-माध्यम से हम दिखा सकते हैं।

इसके बाद एक माध्यम पत्रकारिता का है। मुझे यह कहना है कि 'द टाइम्स आफ इंडिया' कितना भी मोटा हो, लेकिन उसमें 'साइंस' नहीं है। 'नवभारत टाइम्स' में भी कुछ साइंस न हो तो आश्चर्य की बात नहीं है। इसके बारे में मुझे हर समय बहुत खेद होता है कि हमारे समाचार पत्रों में, हमारे अखबारों में विज्ञान के बारे में जानकारी बहुत कम दी जाती है और जो कुछ भी जानकारी दी जाती है - आप 'द टाइम्स आफ इंडिया' देखें, किसी वैज्ञानिक शोध के बारे में विवरण होग तो नीचे देखिए किसी विदेशी एजेंसी का नाम होगा कि यहां से लिया गया है यह समाचार। हो सकता है 'न्यूयार्क टाइम्स' से लिया हो, 'वाशिंगटन पोस्ट' से लिया हो या 'लंदन टाइम्स' से लिया हो।

ऐसा करने की वास्तव में कोई जरूरत नहीं है। हमारे देश में इतने वैज्ञानिक हैं, उनसे पूछकर या कुछ समाचारपत्रों के स्टाफ पर किसी विज्ञान ग्रेजुएट को रखा जाए, उसे यह काम दिया जाए कि विज्ञान के बारे में लिखो, हमारे समाचारपत्रों में विज्ञान के बारे में काफी आ सकता है। मैंने देखा कि इस बारे में 'महाराष्ट्र टाइम्स' जो एक मराठी पत्र में विज्ञान के बारे में एक दिन - बुधवार को - काफी लिखा जाता है। जो 'महाराष्ट्र टाइम्स' ने कर दिखाया, वह 'द टाइम्स आफ इंडिया' ने नहीं किया। 'नवभारत टाइम्स' या 'जनसत्ता' जैसे समाचारपत्रों को ऐसा करने में कोई दिक्कत नहीं होनी चाहिए कि विज्ञान के बारे में एक पन्ना उसमें रहे, हफ्ते में किसी एक दिन। इस तरह से हम विज्ञान को बहुत लोगों तक पहुंचा सकते हैं। आप जानते हैं कि हिन्दी अखबार अधिक पढ़ा जाता है, अंग्रेजी अखबार की अपेक्षा, तो क्यों न इसका फायदा उठाया जाए और हम विज्ञान को अधिक लोगों तक क्यों न पहुंचाएं।

और एक माध्यम - शक्तिशाली माध्यम - है रेडियो और टेलीविजन का। इसके बारे में मैं अपना अनुभव बताता हूं। दो-तीन साल पहले टी. वी. पर कार्ल सेगन की 'कासमास' नाम की एक कथा मालिका हर रविवार को दिखाई जाती थी। इस मालिका को पहले तीन-चार मिनटों में मैं हिन्दी में प्रस्तुत करता था। इसका उद्देश्य यह था कि प्रोग्राम में आप क्या सुनेंगे और देखेंगे, इसकी संक्षिप्त विवरण दर्शकों को दिया जाए तो वे अच्छी तरह से समझ लेंगे। इसी उद्देश्य से मुझसे कहा गया कि दो-तीन मिनटों में प्रत्येक प्रोग्राम की थोड़ी-सी जानकारी, झलक दूं। जब प्रोग्राम-मालिका पूरी हुई तो मुझे कई दर्शकों के पत्र मिले। उन्होंने लिखा था कि जो माध्यम अंग्रेजी के 'कासमास' का था, वह अच्छी तरह से समझ में नहीं आया, लेकिन हिन्दी में शुरू में हमें जो बताया गया, इसके कारण प्रोग्राम हम अच्छी तरह समझ सके। इसका मतलब है कि हमारे देश के अधिकांश दर्शक - बंबई, कलकत्ता जैसे कुछ शहरों को छोड़कर, लेकिन जहां आजकल टी. वी. पहुंच रहे हैं - हिन्दी भाषा - भाषी होते या हिन्दी समझते हैं। इसलिए हिन्दी में टी. वी. के लिए विज्ञान पर अच्छे प्रोग्राम बनने चाहिए। इस दिशा में 'कासमास' के अनुभव के बाद मेरा एक प्रयत्न रहा है कि हिन्दी में वैसी एक चित्र-मालिका बननी चाहिए - और वैसी अब बन रही है फिल्म्स डिवीजन द्वारा। ३० किस्तों की एक मालिका 'ब्रह्मांड' शीर्षक से बन रही है। अभी कुछ महीने और लगेंगे। मुझे आशा है कि हिन्दी माध्यम से इस प्रकार के जो प्रोग्राम टी. वी. पर दिखाए जाएंगे, उनसे लोगों को विज्ञान के बारे में अधिक जानकारी मिल पाएगी।

अब सवाल आता है, विज्ञान के प्रसार में कौन-कौन हाथ बंटा सकते हैं। सामान्य रूप से लोग कहते हैं कि यह काम वैज्ञानिकों का है। वैज्ञानिक कहते हैं कि हमारा काम अपनी प्रयोगशाला में जाकर शोध करना है या अपने छात्रों को पढ़ाना है - अगर हम लोग ऐसा काम करने लगें तो हमारा जो अपना अनुसंधान का काम है, वह आगे नहीं बढ़ पाएगा। लेकिन मैं ऐसा नहीं मानता। वैज्ञानिक को खुद अपने अनुसंधान द्वारा, अन्वेषण द्वारा जो अपने ज्ञान की वृद्धि करने का मौका मिलता है, उसके अलावा विज्ञान और लोगों को पढ़ाने से भी मिलता है। जब हम किसी व्यक्ति को कोई बात समझाना चाहते हैं तो वह प्रश्न पूछता है। उन प्रश्नों के उत्तर देते समय हम उस विषय को अधिक तरह समझ सकते हैं। कोई कितना भी बड़ा पंडित क्यों न हो, वह अगर और लोगों को अपना ज्ञान समझाना चाहता है तो उससे उसके अपने ज्ञान में भी वृद्धि होती है, इसलिए वैज्ञानिकों को ऐसा चाहिए कि अपने समय का कुछ अंश विज्ञान-प्रसार के लिए दें।

विज्ञान के प्रसार में साहित्यिकों को भी आगे आना चाहिए। उनकी लेखनी में वैज्ञानिकों की अपेक्षा अधिक ताकत होती है। मैं विज्ञान पर लेख लिख सकूंगा, लेकिन मेरी हिन्दी इतनी अच्छी नहीं होगी, जितनी किसी प्रतिष्ठित साहित्यिक की होगी। जिसकी लेखनी में इतना दम है, उसे चाहिए कि विज्ञान के बारे में लोगों को कुछ समझाए। आप कहेंगे कि साहित्यिक लोग समझते हैं कि विज्ञान तो हम समझ नहीं सकते, बहुत कठिन बात है, हम लोगों को क्या बताएंगे, लेकिन ऐसी कुछ बात नहीं है। अगर प्रयास करें तो कुछ विज्ञान के विषय - कम से कम विज्ञान-कथा के माध्यम से लोगों के सामने ला सकेंगे। इस बारे में किसी वैज्ञानिक से सहायता ले सकते हैं। वे किसी वैज्ञानिक से चर्चा करें कि मेरे मन में ऐसा विचार आया है तो वैज्ञानिक बता सकते हैं कि बात सही है या नहीं, उसमें क्या सुधार करना चाहिए। इस प्रकार से एक नए प्रकार के साहित्य की निर्मिति हो सकती है। ऐसे नए साहित्य द्वारा हिन्दी का भी विकास होगा। विज्ञान-साहित्य को बीसवीं शताब्दी का नया साहित्य मानना चाहिए, जो अंग्रेजी और अन्य विदेशी भाषाओं में काफी विकसित हो चुका है। हमें ऐसा साहित्य अपनी भाषाओं में लाना चाहिए, इसके लिए मैं मान्य साहित्यिकों से यह कहूंगा कि आप लोग विज्ञान कथाएं लिखिए, लिखने का प्रयास कीजिए, आप लोग अच्छी विज्ञान-कथाएं लिख पाएंगे। साहित्यिकों से मैं यह भी कहूंगा कि अन्य साहित्यिक रूपों से विज्ञान-कथाओं को कुछ भी कम मत समझिए। यह मत समझिए कि जो साइंस के बारे में लिखा है, वह असली साहित्य नहीं है। वह भी साहित्य का महत्वपूर्ण अंश हो सकता है।

आज हम लोग २१ वीं सदी की बातें कर रहे हैं तो २१ वीं सदी विज्ञान-युग से ही जानी जाएगी - २० वीं सदी को ही हम विज्ञान युग कहने लगे हैं। किसी भी भाषा की जो समृद्धि है, वह तत्कालीन जो सामाजिक परिवर्तन होते रहते हैं, उसका किस प्रकार वह चित्रण कर सकती है - इस पर उस भाषा की समृद्धि निर्भर रहती है और अगर हम विज्ञान-युग में प्रवेश कर रहे हैं तो इसकी कुछ झलक तो हमें अपनी भाषा में दिखलानी ही चाहिए - इसलिए हिन्दी को इस क्षेत्र में अधिक आगे बढ़ने की आवश्यकता है।

(बंबई के बी. एन. बांदेकर महाविद्यालय में 'राष्ट्रीय अस्मिता और हिन्दी' विषय पर हुए परिसंवाद में दिए गए भाषण का मुख्य अंश)